नाटक हो तो ऐसे.

मुक्ति कॉमिक्स

प्रकाशकीय

मुक्ति प्रकाशन से 'मुक्ति कॉमिक्स' का यह दूसरा पुष्प प्रकाशित करते हुए हमें अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है। हमारी पहली कॉमिक्स " कौण्डेश से कुन्दकुन्द " की पाठकों द्वारा बहुत अच्छी प्रतिक्रिया व प्रोत्साहन मिलने पर, हम इस संकल्प के साथ प्रवेश कर रहे हैं कि 21 वीं सदी तक 21 कॉमिक्स समाज को दे सकें। आशा है; हमें इसके लिए भरपूर सहयोग मिलेगा। इस सन्दर्भ में हम आज पं. श्री विनीतकुमारजी शास्त्री, आगरा व रूडकी जैन समाज के बहुत आभारी हैं, कि उनसे हमें आर्थिक सहयोग मिला। परन्तु इसके लिए बहुत दुख है कि हम इसे कुछ कठिनाइयों के कारण सही वक्त पर प्रकाशित नहीं कर सकें। एतदर्थ क्षमाप्रार्थी हैं। फिर भी हमें भविष्य में सहयोग मिलता रहेगा इस आशा के साथ –

आर.सी. जैन

कॉमिक्स प्रकाशन में रुड़की जैनसमाज से सहयोग प्राप्त दातारों की सूची

१००१)	श्री नेमचंद जैन	१०१)	श्री आर. सी. बड़जात्या
१००१)	सामलरांक फाउन्डेशन कन्सलटेन्ट्स	१०१)	श्री विजय कुमार जैन
१००१)	कैलाशचन्द्र जैन ट्रंकवाले	१०१)	श्री विजेन्द्र कुमार जैन
१००१)	साधुरामजी जैन इमली वाले	१०५)	श्री लालचन्द्र जैन
५०१)	अरुणकुमार जी जैन, कटपीस सेन्टर	१०१)	श्री जैन प्रिन्टिग प्रेस
५०१)	महेन्द्र कुमार वीरेन्द्र कुमार जैन	१०१)	श्री शीतल प्रसाद जैन
५०१)	तीरथकुमार जी जैन	१०१)	श्री शीतल प्रसाद जैन
५०१)	प्रीतमकुमार जी जैन	१०१)	श्री नरेश प्रसादजी जैन
५०१)	श्रीमति राजकुमार जी जैन	१०१)	श्रीमति अंगूरीदेवी जैन
२५१)	श्रीमति सरोजदेवी जैन	१०१)	श्रीमति रेनमालाजैन
२५१)	श्री श्रेयांस प्रसाद जी जैन	१०१)	श्री हुलाश चन्द्रजी जैन
१५१)	श्री प्रद्युम्न कुमार जी जैन हाईडिल	१०१)	श्री एस. सी. जैन
१०५)	श्री भूपेन्द्र कुमार जी जैन	१०१)	श्री आर. सी. जैन
१०१)	श्रीमति विजय जैन	१०१)	श्रीमति तारादेवी जैन
१०१)	श्री अशोककुमार जैन	१०१)	श्री प्रेमचन्दजी जैन
१०१)	श्रीमति शारदादेवी जैन	२२४)	फुटकर राशि प्राप्त

संस्करण: महावीर निर्वाणोत्सव-९३

मूल्य – छह रुपये

नाटक हों तो ऐसे.
ब्रह्मगुलाल
आलेख — डॉ० योगेशचन्द्र जैन.
चित्रांकन — त्रिभुवन सिंह यादव
सहयोग — सरोज वी.एम.'सन'
बात बहुत पुरानी है। एक राजकुमार था, उसका मित्र ब्रह्मगुलाल बहुत कुशल-बहुरूपिया था.
राजकुमार अपने मित्र की प्रायः प्रशंसा करता ही रहता था.
मेरा दोस्त ब्रह्मगुलाल तो लाखों में एक है, उसका अभिनय तो बस पूछो ही मत... जिस रूप को धारण करता है वही लगता है.
जब देखो तब उसकी ही प्रशंसा...
हम सब तो जैसे हैं ही नहीं.

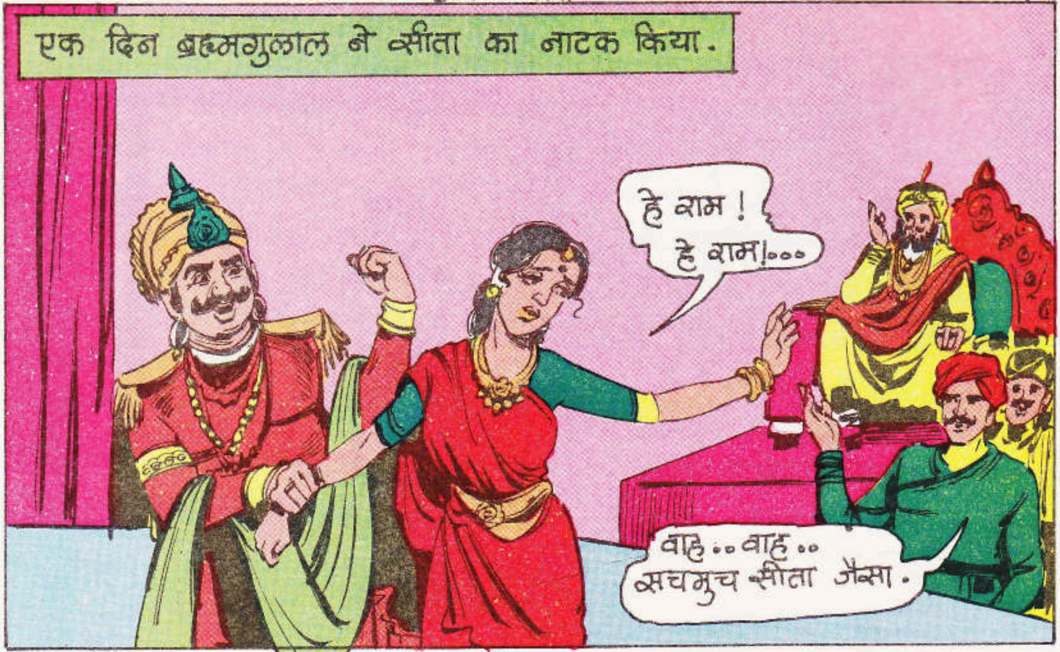
एक दिन ब्रह्मगुलाल ने सीता का नाटक किया.
हे राम ! हे राम!...
वाह.. वाह.. सचमुच सीता जैसा.

और फिर तो ब्रह्मगुलाल का यश राजदरबार में भी चारों तरफ फैल-गया। इससे जल-भुनकर मन्त्री ने एक भयंकर षड्यंत्र रचा. उसने-राजकुमार को भड़काया.
कल तुमनें ब्रह्मगुलाल का नाटक देखा.
अरे ! ऐसा स्वांग करनें में क्या हम तो तब जानें कि.. वह अपनी परीक्षा दें
हां..भाई हां. ये भी-ठीक कहते हैं.

राजकुमार को तो मित्र की योग्यता पर पूर्ण विश्वास था ही, अतः उसने कहा...
तो ठीक है, उसकी परीक्षा भी कर लो.
और हम भी-
ऐसा है, तो हम सब उसको सिंह के रूप में देखना चाहतें हैं.
परन्तु हम सिंह का रूप ही नहीं, उसका तेज व पराक्रम भी देखना चाहते हैं.
राजकुमार मंत्री की बात को दृढ़ता से स्वीकार करके गुलाल के पास पहुंचा.
प्रिय मित्र.. आज तुम्हें अपनी कला से दुश्मनों के दांत खट्टे करने ही होंगे.
यह सुन ब्रह्मगुलाल सोचनें लगा.
अब यह परीक्षा क्यों? हमारी कला का प्रदर्शन तो कई बार हो चुका, अवश्य ही कोई रहस्य है.

काफी सोच-विचारकर ब्रह्मगुलाल ने राजकुमार से कहा-
पर सिंह का ही स्वांग क्यों ? और फिर उसका- पराक्रम भी... खैर.. मैं करूंगा, परन्तु ....।
परन्तु क्या ? मैं इसके लिए सब कुछ करनें को तैयार हूं, तुम स्पष्ट करो.
यदि उस समय हमसे कोई अपराध हो जावे तो क्षमा किया जावे.
ठीक है, मैं अभी पिताजी से वचन लेकर आता हूं.
राजकुमार राजा के पास गया, और सारा वृतान्त कहा.
तुमनें यह ठीक- नहीं किया पुत्र, फिर भी मैं एक प्राणीवध के अपराध को माफ कर दूंगा.

दूसरे दिन राजा की नाट्यशाला खचाखच भरी हुई थी.
वाह ! नाट्यशाला देखो.. सजावट कितनी सुन्दर....
अरे ! वह देखो, सिंहासन के पास बकरा ? पर वह क्यों बंधा है ?
उपस्थित जनता बेसब्री से-प्रतिक्षा• कर रही थी.. तभी...

एक खूँखवार शेर ने छलांग मारकर सभा मण्डप में प्रवेश किया.
अरे ! ये डरपोक पेशाब ही कर बैठा.
सिंह का विकराल रूप देखकर कुछ दर्शक तो भयभीत होकर भागने लगे. तभी...

राजकुमार सिंह की भयानक गर्जना करनें पर भी वहीं बैठा रहा और दहाड़ते सिंह को ललकारते हुए कहा कि ---
रे सिंह! तेरा कैसा पराक्रम? तेरे सामनें बकरा खड़ा और तू गधे की तरह ढेचूं-ढेचूं कर रहा, धिक्कार है तेरी मां के दूध को..

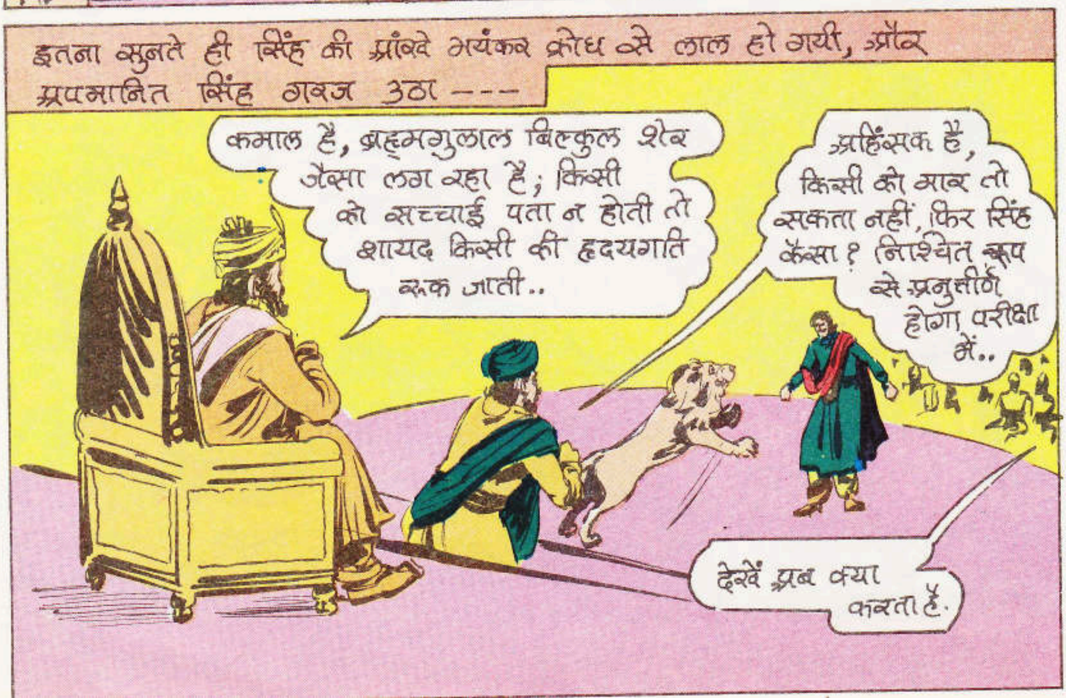
इतना सुनते ही सिंह की आंखे भयंकर क्रोध से लाल हो गयी, और अपमानित सिंह गरज उठा ---
कमाल है, ब्रह्मगुलाल बिल्कुल शेर जैसा लग रहा है; किसी को सच्चाई पता न होती तो शायद किसी की हृदयगति रुक जाती..
अहिंसक है, किसी को मार तो सकता नहीं, फिर सिंह कैसा? निश्चित रूप से अनुत्तीर्ण होगा परीक्षा में..
देखें अब क्या करता है.

अभिनय से प्रभावित होकर राजकुमार व दरबारी सोच ही रहे थे कि तभी ---
एक ही झटके में राजकुमार का काम तमाम हो गया.
हाय ! ये कैसा है संसार...
रंगमंच को शोकमंच में बदलते देर न लगी.
सारा दरबार भय व दुख के वातावरण में बदल गया.
और फिर ब्रह्मगुलाल अपने मानव रूप में आ गया.
आह ! अपने मित्र के प्रति ये कैसा अपराध ? धिक्कार है मुझे... और मेरे इस नाटक को
जैसे ब्रह्मगुलाल मनुष्य होकर भी सिंह का अभिनय करने से हिंसा जैसा घोर अपराध कर बैठा, उसी तरह यह आत्मा स्वभाव से भगवान आत्मा होकर भी मनुष्यादि शरीर को पाकर उसमें मोह करके घोर अपराध करते हुए चार-गति में घूम रहा है । हाय ! कैसी हुई इस भगवान-आत्मा की दुर्दशा.

इकलौते पुत्र की मृत्यु से राजा बेहद दुखी थे, निरूपाय भी
हाय! मैं बरबाद हो गया, अपनी गलती से ही अपने प्यारे पुत्र को खो बैठा.
शान्त होइये राजन! जो होना था वह हो गया। परन्तु ब्रह्मगुलाल ने यह अच्छा नहीं किया, यदि...
क्या? तुम्हारा मतलब है उसने जानबूझकर किया है। नहीं.. नहीं वह तो सच्चा कलाकार है, निर्दोष है, जो रूप धरता है, उसमें तन्मय हो जाता है।
परन्तु राजन! इसके लिए मेरा मन नहीं मानता अनजाने में यह सब सम्भव भी तो नहीं...
राजा को भड़काते हुए मंत्री ने कहा -
यदि आपकी बात सत्य ही है तो फिर उससे दिगम्बर मुनि का नाटक कराके वैराग्य व शांति का उपदेश देने को कहो... फिर देखो सच्चाई क्या थी?
अच्छा! हम उससे यह कहेंगे, इससे हमारे पुत्र वियोग का दुख भी दूर होगा और उसकी परीक्षा भी.

दूसरे दिन राजा ने ब्रह्मगुलाल को बुलाया.
प्रिय कलाकार ! अब हम शान्त व वैराग्य रूप का दर्शन करना चाहतें हैं। अतः तुम दिगम्बर मुनि....
राजन! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। परन्तु हमें कुछ समय चाहिये।
राजा को वचन देकर ब्रह्मगुलाल जैन साधुओं की सूक्ष्म-दिनचर्या देखनें जंगल जा पहुंचा
अहो! इनका कितना कठिनतम परन्तु सहज-आनन्ददायक जीवन.
वहां से थकाहारा वह घर आकर देर रात तक सोचता रहा..
रे मूर्ख ! दिगम्बर जैन साधु का जीवन कोई नाटक नहीं जो खेला जा सके, वह तो विवेक व वैराग्य भावना का फल है.

प्रातः ब्रह्मगुलाल ने माँ से अपनी समस्या कही, तो माँ रोने लगी.
अरी माँ! तू रोती क्यों है? क्या तुझे अपने पुत्र की योग्यता पर विश्वास नहीं?
अरे बेटे! क्या अपने दूध से पाले-पोषे पुत्र की योग्यता का ज्ञान नहीं? रे मूर्ख! तेरी योग्यता पर विश्वास होने से ही रो रही हूँ।
पर आखिर क्यूँ?
मेरे लाल! माँ सब कुछ सह सकती है, पर पुत्र वियोग नहीं, और दिगम्बर वेश धारण करके पुनः दूसरा भेष नहीं रखा जाता, अतः वियोग निश्चित है।
माँ ठीक ही तो कहती है।

मुनि बनने का निर्णय करके वह अपने घर वालों की आज्ञा लेने आता है।
हे माँ! मैंने पाप के नाटक तो बहुत किये, और तूने तो उसकी प्रशंसा तक की। अब धर्म का नाटक करने का अवसर आया है माँ! तू इसकी सहर्ष आज्ञा दे न।
हाँ! हाँ! क्यों नहीं! पर बेटे यह नाटक तो सभी नाटक कर लेने के बाद का नाटक है; इसके बाद दूसरा नाटक नहीं किया जाता, और तुझे अभी पिता होना है, तेरी अभी शादी हुई है।
प्रिय भाई! माँ सच कहती है, यह कालजयी नाटक है और इतना सरल भी नहीं है, तथा यह प्रदर्शन की वस्तु तो है ही नहीं, लोक रंजन का विषय भी नहीं है, अतः अपना विचार छोड़ दो।
मित्र! जानता हूँ। साधु जीवन जीना एक विशेष कला है, जिसके लिए हृदय की सच्चाई व अभ्यास चाहिये। मैंने इस चुनौती को विवेकपूर्वक स्वीकारा है।

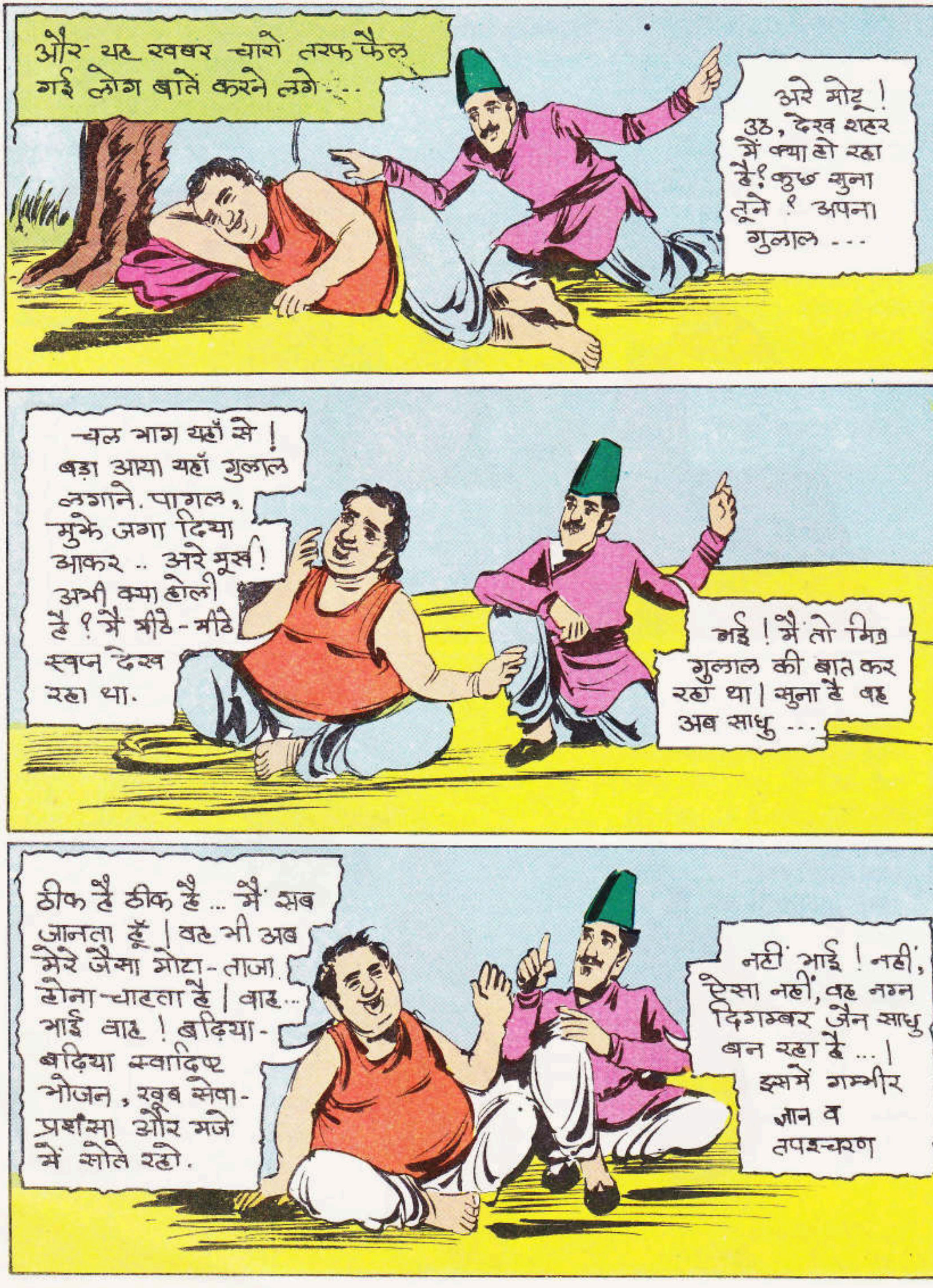
और यह खबर चारों तरफ फैल गई लोग बातें करने लगे...
अरे मोटू! उठ, देख शहर में क्या हो रहा है? कुछ सुना तूने? अपना गुलाल ---
चल भाग यहाँ से! बड़ा आया यहाँ गुलाल लगाने. पागल, मुझे जगा दिया आकर .. अरे मूर्ख! अभी क्या होली है? मैं मीठे-मीठे स्वप्न देख रहा था.
भई! मैं तो मित्र गुलाल की बात कर रहा था। सुना है वह अब साधु ---
ठीक है ठीक है ... मैं सब जानता हूँ। वह भी अब मेरे जैसा मोटा-ताजा होना चाहता है। वाह... भाई वाह! बढ़िया-बढ़िया स्वादिष्ट भोजन, खूब सेवा-प्रशंसा और मजे में सोते रहो.
नहीं भाई! नहीं, ऐसा नहीं, वह नग्न दिगम्बर जैन साधु बन रहा है ...। इसमें गम्भीर ज्ञान व तपश्चरण

अच्छा ! तो ये बात थी अब समझा कि - - -
अरे पेटू! अब पता चला कि तेरे पास समझदारी भी है। बोल तू क्या कह रहा था.
मैं अभी कुछ दिनों से भ्रमगुलाल को जंगल में कुछ नग्न साधुओं के पास पढ़ता-लिखता देख रहा हूँ.
कमाल है, साधु होने के लिए इतने दिनों से कठोर अभ्यास - - - सच है, साधु बनने के पहले साधु का जीवन समझना आवश्यक है.
पर मेरी तो कुछ और ही समझ में आ रहा है। राजा ने साधु का नाटक करने का कहकर पुत्र की मृत्यु का बदला तो नहीं लिया है ?
ताकि नंगा साधु होकर भूख-प्यास तथा अन्य तकलीफें सह-सहकर मर जाये.

वाह ! लम्बु छोटे वाह ! खूब लम्बी सोची.
क्या खाक सोची। हमारा गुलालु बहुत बड़ा कलाकार है, और अच्छा व बड़ा कलाकार वही हो सकता है, जिसे अपनी कला में आनन्द आये। देख लेना हमारे मित्र को भी अपने इस कार्य में आनन्द ही आयेगा.
मैं कहता हूँ कि वह ऐसा नाटक करे ही क्यों ? इससे क्या लाभ ? राजा का क्रोध तो दूर होने से रहा
मुनि होने के बाद राजा के खुश होने में कोई दम नहीं, और नाराजगी में कोई गम नहीं क्योंकि, गुलाल वीतरागी हो जायेगा।
हाँ भाई ! ज्ञान रूपी कला जिनके हृदय में प्रकट हो जाती है, वे तो संसार में सहज ही वैरागी हो जाते हैं।
अब तो मैं समझ गया भाई ! कि आत्मा और शरीर का भेद ज्ञान प्रकट होना भी एक कला ही है।

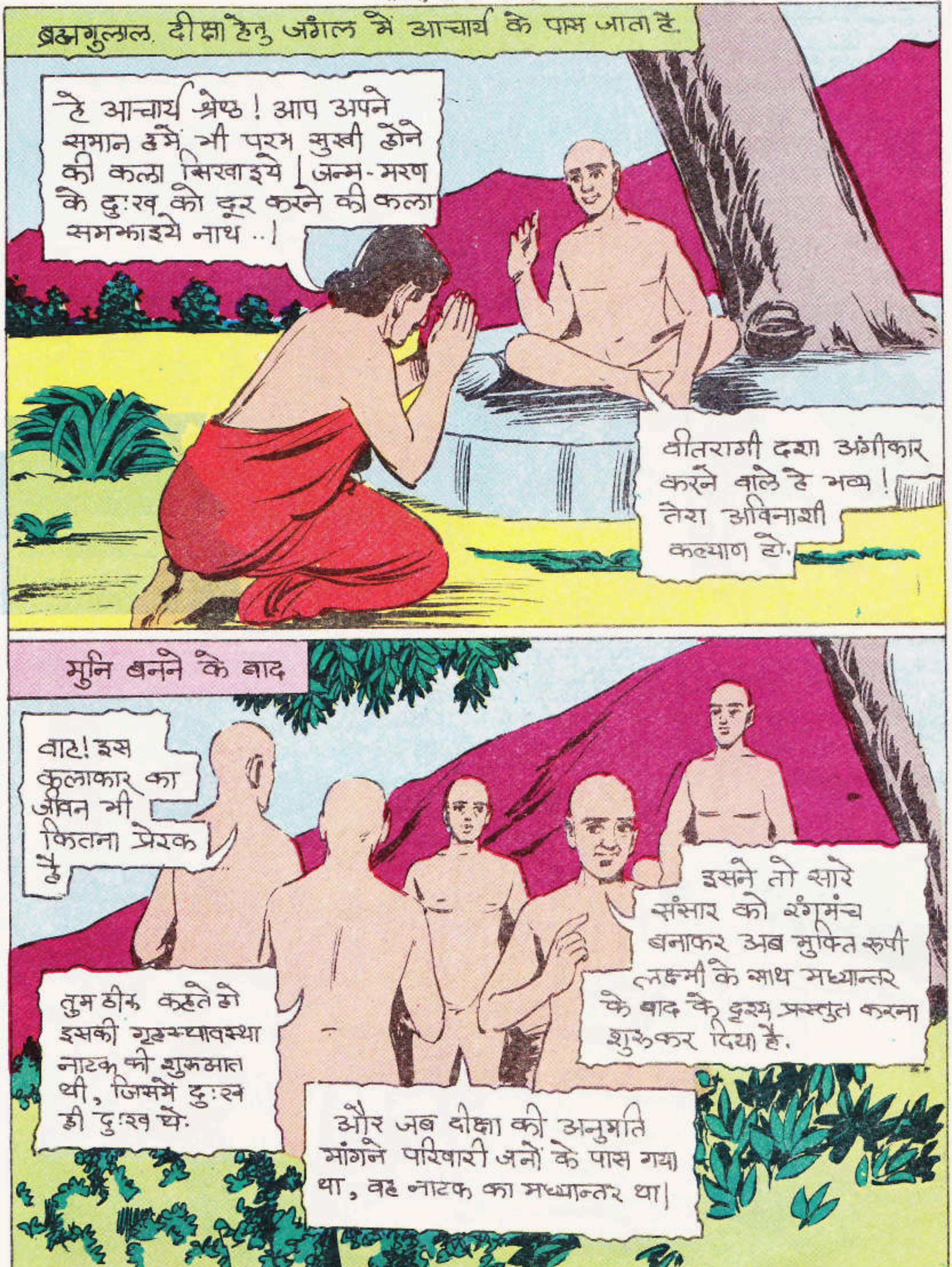
ब्रह्मगुलाल दीक्षा हेतु जंगल में आचार्य के पास जाता है.
हे आचार्य श्रेष्ठ ! आप अपने समान हमें भी परम सुखी होने की कला सिखाइये | जन्म-मरण के दुःख को दूर करने की कला समझाइये नाथ ..!
वीतरागी दशा अंगीकार करने वाले हे भव्य ! तेरा अविनाशी कल्याण हो.
मुनि बनने के बाद
वाह! इस कलाकार का जीवन भी कितना प्रेरक है
इसने तो सारे संसार को रंगमंच बनाकर अब मुक्ति रूपी लक्ष्मी के साथ मध्यान्तर के बाद के दृश्य प्रस्तुत करना शुरूकर दिया है.
तुम ठीक कहते हो इसकी गृहस्थावस्था नाटक की शुरूआत थी, जिसमें दुःख ही दुःख थे.
और जब दीक्षा की अनुमति मांगने परिवारी जनों के पास गया था, वह नाटक का मध्यान्तर था|

परमसत्य कहते हैं ये मुनिजन; क्यों कि मुनिधर्म से ही मोक्षरूप परमसुख प्राप्त होने के कारण यह नाटक के नियमानुसार सुखान्त भी है.
वाह भाई पण्डित जी वाह! खूब कही--
बहुत अच्छा--

और एक दिन भाव-परिवर्तन का जादूगर ब्रह्मगुलाल राजदरबार की ओर चल दिया.

राजन! सुना है ब्रह्मगुलाल मुनि बन गये हैं....

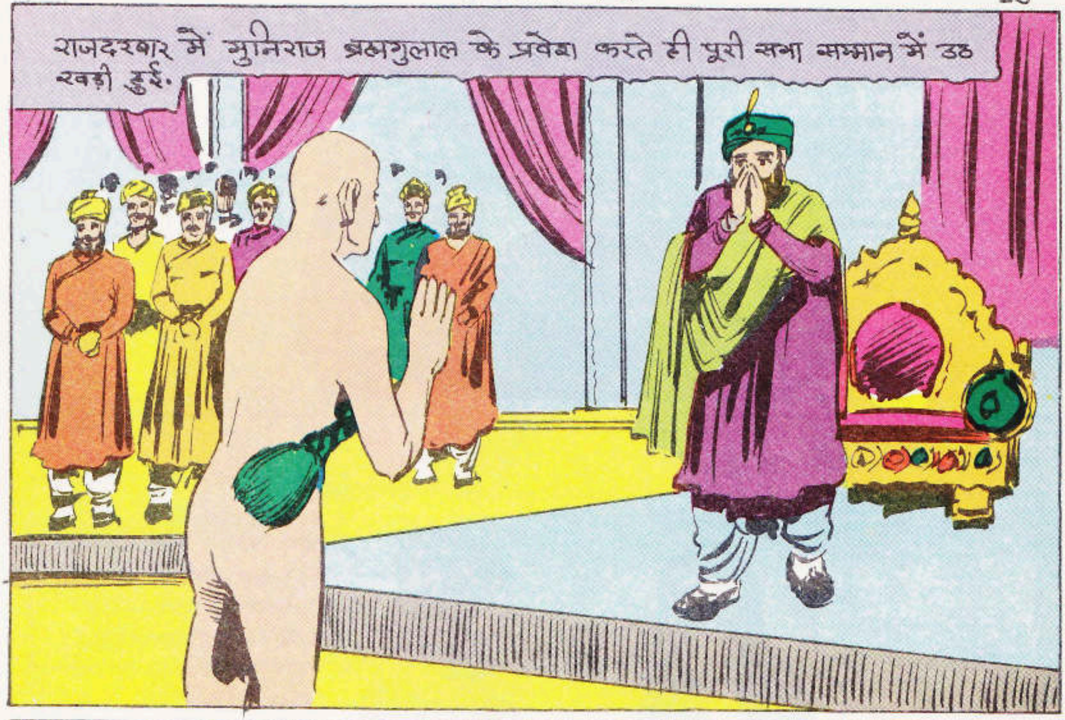
राजदरबार में मुनिराज ब्रह्मगुलाल के प्रवेश करते ही पूरी सभा सम्मान में उठ खड़ी हुई.

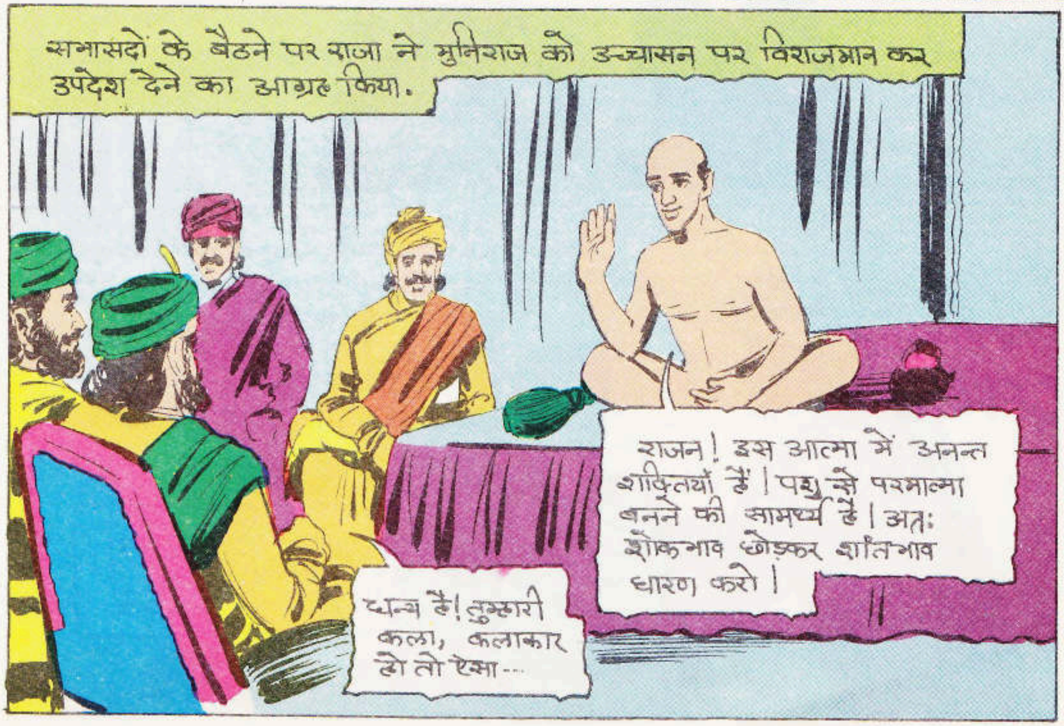
सभासदों के बैठने पर राजा ने मुनिराज को उच्चासन पर विराजमान कर उपदेश देने का आग्रह किया.
राजन! इस आत्मा में अनन्त शक्तियाँ हैं। पशु से परमात्मा बनने की सामर्थ्य है। अतः शोकभाव छोड़कर शांतिभाव धारण करो।
धन्य है! तुम्हारी कला, कलाकार हो तो ऐसा...

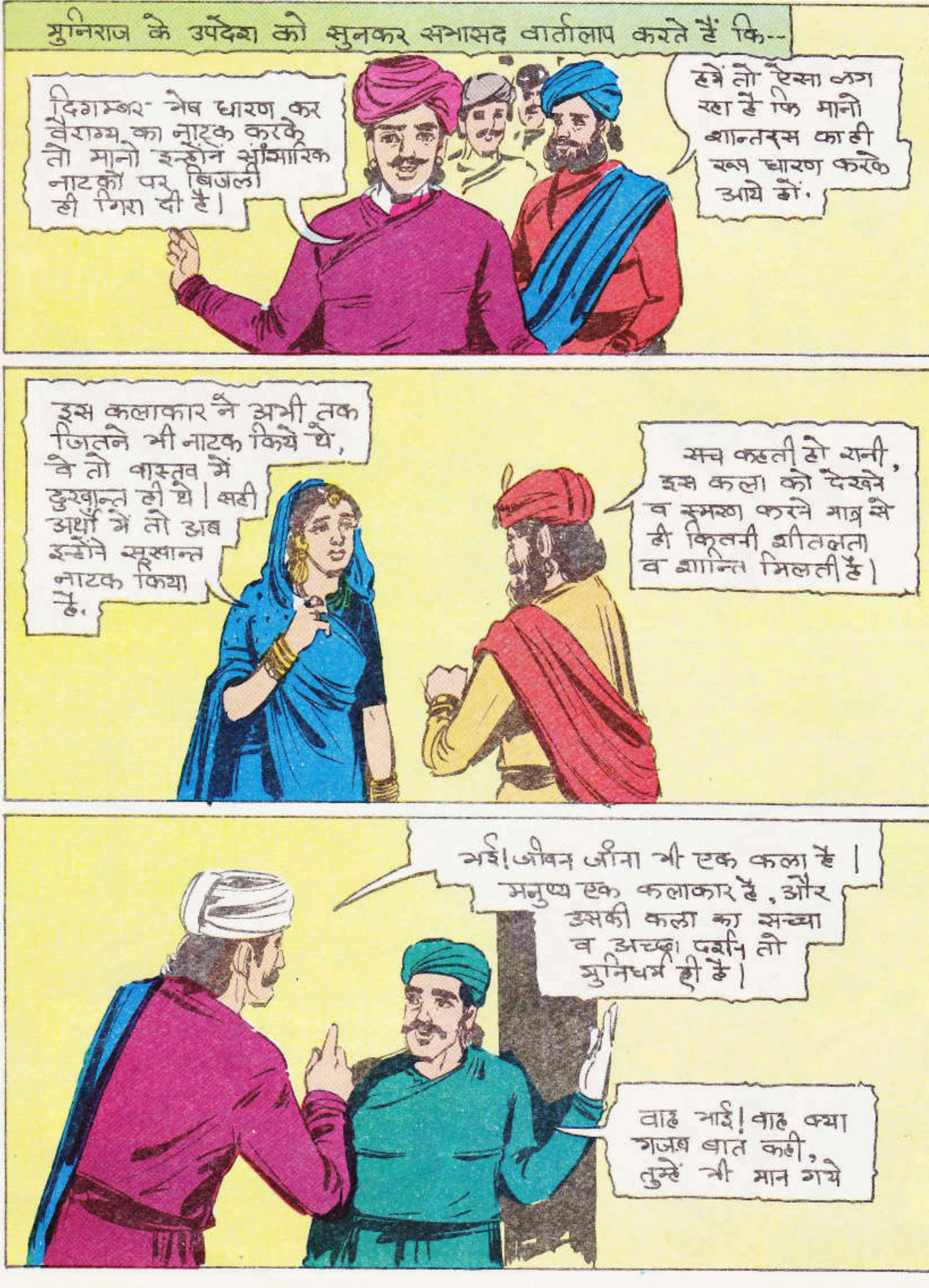
मुनिराज के उपदेश को सुनकर सभासद वार्तालाप करते हैं कि--
दिगम्बर भेष धारण कर वैराग्य का नाटक करके तो मानो इन्होंने सांसारिक नाटकों पर बिजली ही गिरा दी है।
हमें तो ऐसा लग रहा है कि मानो शान्तरस का ही रूप धारण करके आये हों.
इस कलाकार ने अभी तक जितने भी नाटक किये थे, वे तो वास्तव में दुखान्त ही थे। सही अर्थों में तो अब इन्होंने सुखान्त नाटक किया है.
सच कहती हो रानी, इस कला को देखने व स्मरण करने मात्र से ही कितनी शीतलता व शान्ति मिलती है।
भई! जीवन जीना भी एक कला है। मनुष्य एक कलाकार है, और उसकी कला का सच्चा व अच्छा दर्शन तो मुनिधर्म ही है।
वाह भाई! वाह क्या गजब बात कही, तुम्हें भी मान गये

तभी राजा को भगुलाल के मुनि भेष की परीक्षा करने का विचार आता है, वह कहता है —
हम तुम्हारे इस साधु-वेश से बहुत प्रसन्न है। कहो तुम्हें क्या वरदान दें।
हे भव्य! साधु के प्रति ऐसे अनुचित विचार शोभादायक नहीं हैं।
मैं तो यह कह रहा हूँ कि यहाँ आकर आपने साधु बनने का जो नाटक किया है, उससे हम प्रभावित हुये, अब तुम अपने मूल वेश में आओ।
राजन! यह जीव तीन लोक के मंच पर अनादि काल से पशु, नारकी, पेड़-पौधे, देव, मनुष्यादि का शरीर धारण कर नाटक ही तो खेल रहा है परन्तु...
परन्तु क्या ?
नाटक खेलते खेलते इसमें इतना रम गया कि, अपने असली स्वरूप को ही भूल गया। "मैं कौन हूँ" इसकी इसने अभी पहचान ही नहीं की है।

क्या मैं इतना भी नहीं जानता हूँ ? मैं राजा हूँ, राजा, समझे ! इस पृथ्वी का स्वामी .. सबका मालिक.
अरे, मन्दबुद्धि ! जरा सोचो, जब तुम्हारे पास राज्य नहीं था, तब कहाँ के राजा थे, और अब भी तुम वही हो।
राजन ! पृथ्वी का स्वामी कोई नहीं, कोई किसी का मालिक नहीं, यहाँ सभी अपनी2 सत्ता के स्वामी हैं, उसको पहचानना इस आत्मा का पहला कर्तव्य है। अत: तुम सब मृत्यु आने के पहले चेतो।
आप कुछ और स्पष्ट कहें.
यह कहकर मुनिराज जंगल में चले गये।
यह बात तो मैंने अभी तक सुनी ही नहीं, अपूर्व बात है वाह! नाटक हो तो ऐसा.
ब्रह्मगुलाल ने तो दिखा ही दिया कि मुनिधर्म ही शान्ति व सुख प्राप्ति का सच्चा साधन है।

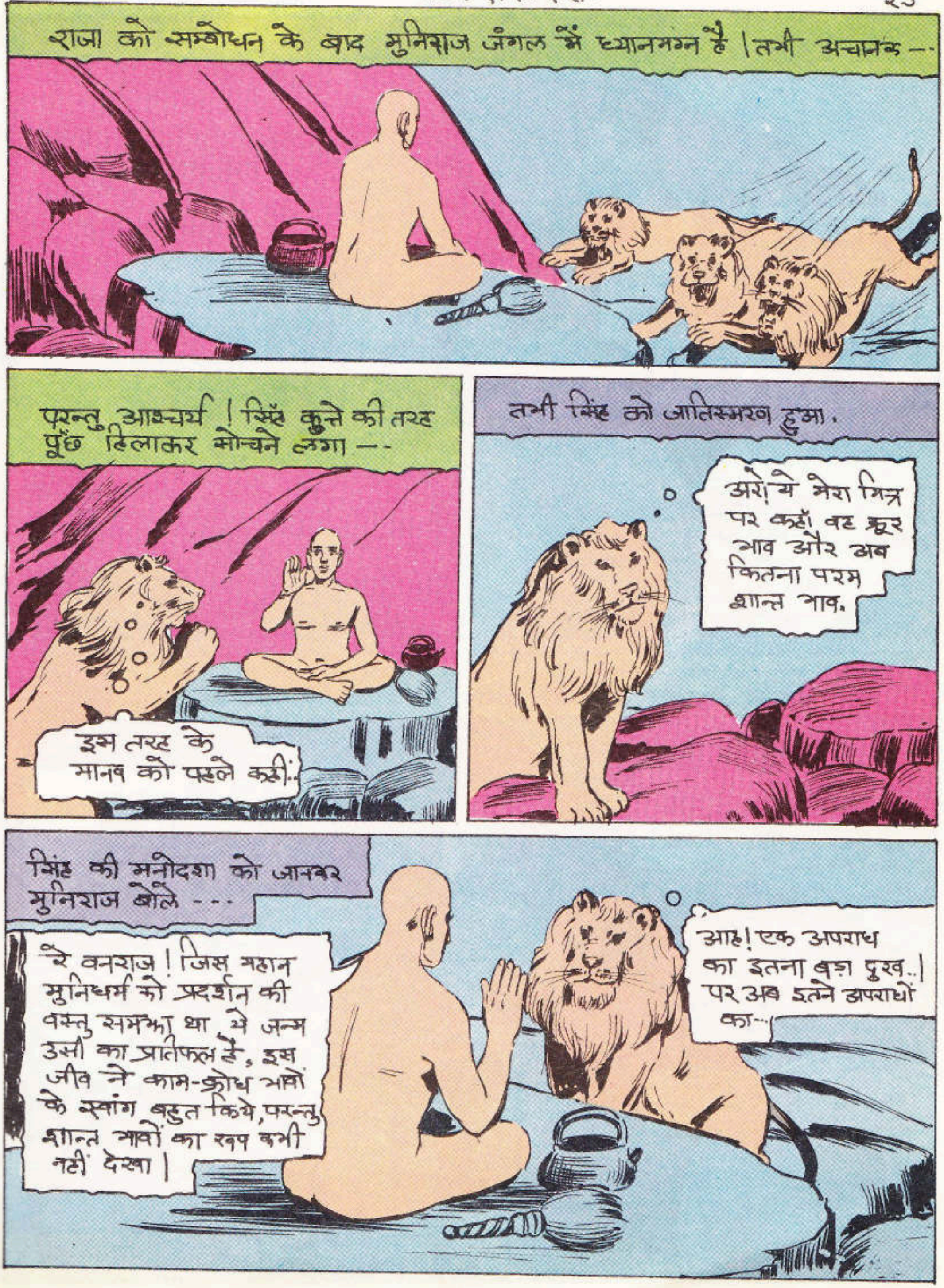
राजा को सम्बोधन के बाद मुनिराज जंगल में ध्यानमग्न हैं। तभी अचानक --
परन्तु आश्चर्य! सिंह कुत्ते की तरह पूँछ हिलाकर सोचने लगा --
इस तरह के मानव को पहले कहीं..
तभी सिंह को जातिस्मरण हुआ.
अरे! ये मेरा मित्र पर कहाँ वह क्रूर भाव और अब कितना परम शान्त भाव.
सिंह की मनोदशा को जानकर मुनिराज बोले ---
रे वनराज! जिस महान मुनिधर्म को प्रदर्शन की वस्तु समझा था, ये जन्म उसी का प्रतिफल है, इस जीव ने काम-क्रोध भावों के स्वांग बहुत किये, परन्तु शान्त भावों का रूप कभी नहीं देखा।
आह! एक अपराध का इतना बड़ा दुख..! पर अब इतने अपराधों का--

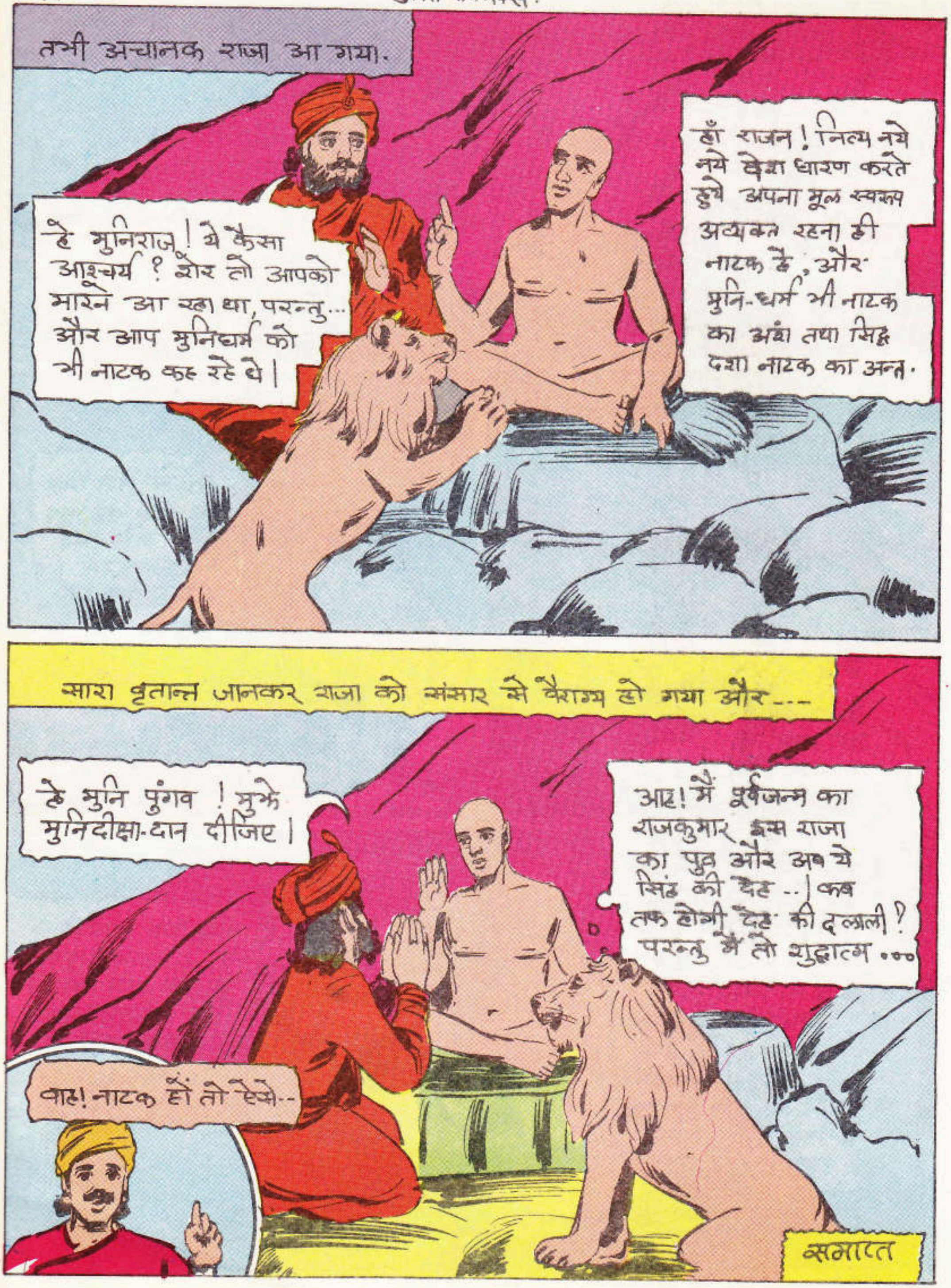
तभी अचानक राजा आ गया.
हे मुनिराज! ये कैसा आश्चर्य? शेर तो आपको मारने आ रहा था, परन्तु... और आप मुनिधर्म को भी नाटक कह रहे थे।
हाँ राजन! नित्य नये नये वेश धारण करते हुये अपना मूल स्वरूप अव्यक्त रहना ही नाटक है, और मुनि-धर्म भी नाटक का अंश तथा सिद्ध दशा नाटक का अन्त.
सारा वृतान्त जानकर राजा को संसार से वैराग्य हो गया और---
हे मुनि पुंगव! मुझे मुनिदीक्षा-दान दीजिए।
आह! मैं पूर्वजन्म का राजकुमार, इस राजा का पुत्र और अब ये सिंह की देह..! कब तक होगी देह की दलाली? परन्तु मैं तो शुद्धात्म...
वाह! नाटक हों तो ऐसे--
समाप्त

अंगारक
आलेख ० – डॉ० योगेश जैन०
चित्रांकन – त्रिभुवन सिंह
सहयोग – सरोज वी० एम०
आज सेठानी ईर्ष्या से जली-भुनी जा रही थी और पड़ोसिन को नीचा दिखाने की सोच रही थी, तभी उसके पति ने प्रवेश किया।
अरी भागवान ! सुनो अभी तक भोजन नहीं--
मुझसे मत बोलो तुम्हारी नौकरानी हूं ? रसोइया हूं ?
चन्द्रमुखी से ज्वालामुखी बनी पत्नी की खुशामद करते हुये भोलू बोला –
रानी कुछ कहो भी, बात क्या हुई ? कहे बिना हमें कैसे पता-चले ?
क्या कहूँ ? मुहल्ले की सारी औरतें तो रोज नये-नये गहने पहनें.. और मैं बस वही सालों पुराना हार, -चूड़ियां - ।
अरी बावली ! कैसी बातें करती हो ? नारी के गले की शोभा तो मधुर वाणी, व्यवहार और उसका शील है।
तुम कुछ समझते हो ? बिना सुन्दर गहने पहने समाज में सम्मान नहीं मिलता।

तुम्हें क्या हो गया है? भैंस के गले में बँधी साँकल की तरह गले में हार बाँध लेने से समाज में इज्ज़त होती है
मुझे उपदेश नहीं हार-चाहिये हार--
फलस्वरूप पत्नी पीड़ित भोलूराम सर्राफ की दुकान पर जा पहुँचा।
सेठ जी! कोई ऐसा सुन्दर हार दिखाओ जो किसी के पास न हो।
अच्छा! बैठो, लाता हूँ। ऐसा हार, जो संसार में कोई न बना सके--।
ये लो बस एक ही है। अंगारक ने बनाया था, जो राजा का विशेष सुनार था, पर अब वह कभी नहीं बनायेगा--।
पर ऐसा क्यों? पूरी बात कहो न!

और अंगारक की कथा सुनकर भोलू अपने घर आया |
लो प्यारी संसार का सबसे सुन्दर हार...
वाह! सचमुच कितना सुन्दर... तुम बहुत अच्छे हो
दूसरे दिन जब हार पहनकर उत्सव में गई
ये कितनी निर्दयी दुष्ट औरतें.. | मेरे हार कंगन को कोई देख ही नहीं रही... ना कोई पूछ रही ...
दुःखी सेठानी ने गहने दिखाने की एक तरकीब निकाली | अपने घर में स्वयं ही आग लगाकर...
आग - आग... बचाओ - बचाओ...

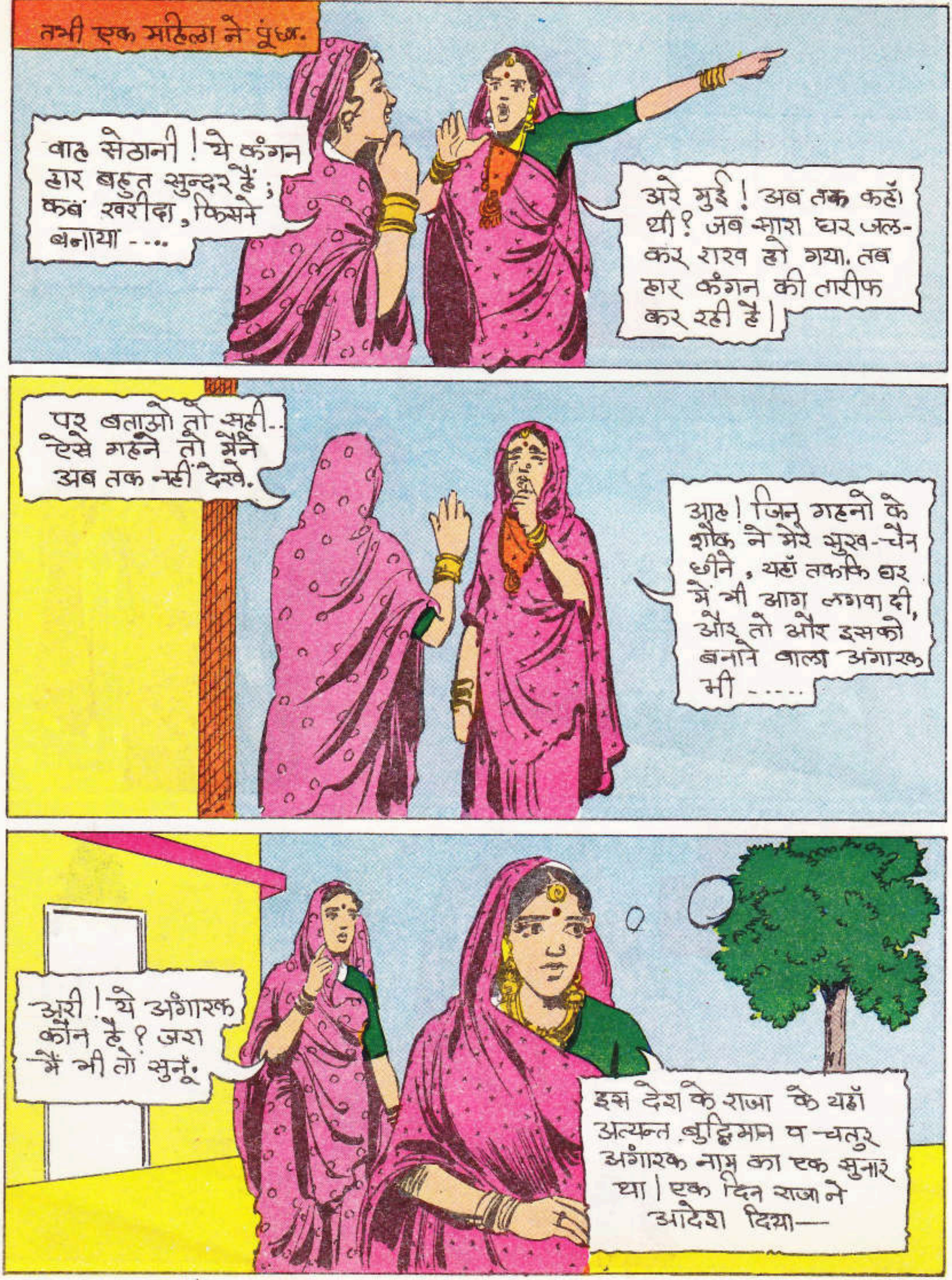

तभी एक महिला ने पूछा.
वाह सेठानी! ये कंगन हार बहुत सुन्दर हैं; कब खरीदा, किसने बनाया - - -
अरे मुई! अब तक कहाँ थी? जब सारा घर जलकर राख हो गया, तब हार कंगन की तारीफ कर रही है।
पर बताओ तो सही.. ऐसे गहने तो मैंने अब तक नहीं देखे.
आह! जिन गहनों के शौक ने मेरे सुख-चैन छीने, यहाँ तक कि घर में भी आग लगवा दी, और तो और इसको बनाने वाला अंगारक भी - - - -
अरी! ये अंगारक कौन है? जरा मैं भी तो सुनूं.
इस देश के राजा के यहाँ अत्यन्त बुद्धिमान व चतुर अंगारक नाम का एक सुनार था। एक दिन राजा ने आदेश दिया—

प्रिय अंगारक! अबकी बार ऐसे आभूषण बनाओ, जो अब तक किसी ने न बनाये हों।
जैसी आपकी इच्छा.
और राजा ने सोना व अमूल्य नगीना देकर विदा किया।
इस तरह अंगारक सोना व नगीना लेकर अपने घर गहने बनाने लगा।
अजी उठो! सुबह से काम कर रहे हो, दस बज गये, भोजन करलो।
हाँ! हाँ! अभी आता हूँ।
वह भोजन के लिये हाथ-मुँह धोने घर के बाहर आता है।

पर जैसे ही घर के बाहर आता है तो वह देखता है कि ---
अरे वाह! धन्य भाग हमारे, अतिथि-पूजा-सत्कार का महान सुअवसर! मुनिराज!, लगता है साक्षात् मोक्षमार्ग ही हमारे द्वार पर चलकर आ रहा हो।
महान पुण्योदय से अंगारक पत्नी सहित मुनिराज को पड़गाहन कर आहार देता है।
तभी घर के आंगन में वृक्ष पर बैठा भूखा मोर नीचे उतर आता है।

नवधा-भक्ति पूर्वक आहारदान के बाद अंगारक स्वयं भोजन करता है।
और फिर जब गहने बनाने आता है तो - - -
हाय! मैं लुट गया --- अब क्या होगा -- अभी तो यहीं था..
अरे ! क्या हो गया ? इतनी सर्दी में भी पसीना -- क्या ढूंढ रहे हो ?
चुप रह ! मैं तो मर जाऊँगा, क्या मुँह दिखाऊँगा ..। अभी तो यहीं रखकर गया था.
राजा का बेशकीमती नगीना, मैं यहीं रखकर गया था ; नहीं मिला तो मर जाऊँगा ...
हाय ! क्या कह रहे हो ? अब क्या होगा ?

मुनिराज के अलावा तो अभी तक यहाँ कोई नहीं आया, लगता है वही ---
अरे! तुम्हें पता है कि तुम क्या कह रहे हो? अचौर्य-महाव्रत के धारी मुनिराज क्या कभी ऐसा अधम कार्य कर सकते हैं?
नहीं-- नहीं वही पापी अधम धूर्त-- जो मेरे नगीने को..
आह! मैं क्या सुन रही हूँ? अरी धरती! तू फट क्यों नहीं गई--। काश! आज मैं बहरी होती।
और अत्यन्त क्रुद्ध होकर अंगारक मुनिराज को मारने जंगल की ओर चल दिया।
अरे! वह देखो! वही है धूर्त-चोर --- देखता हूँ ...

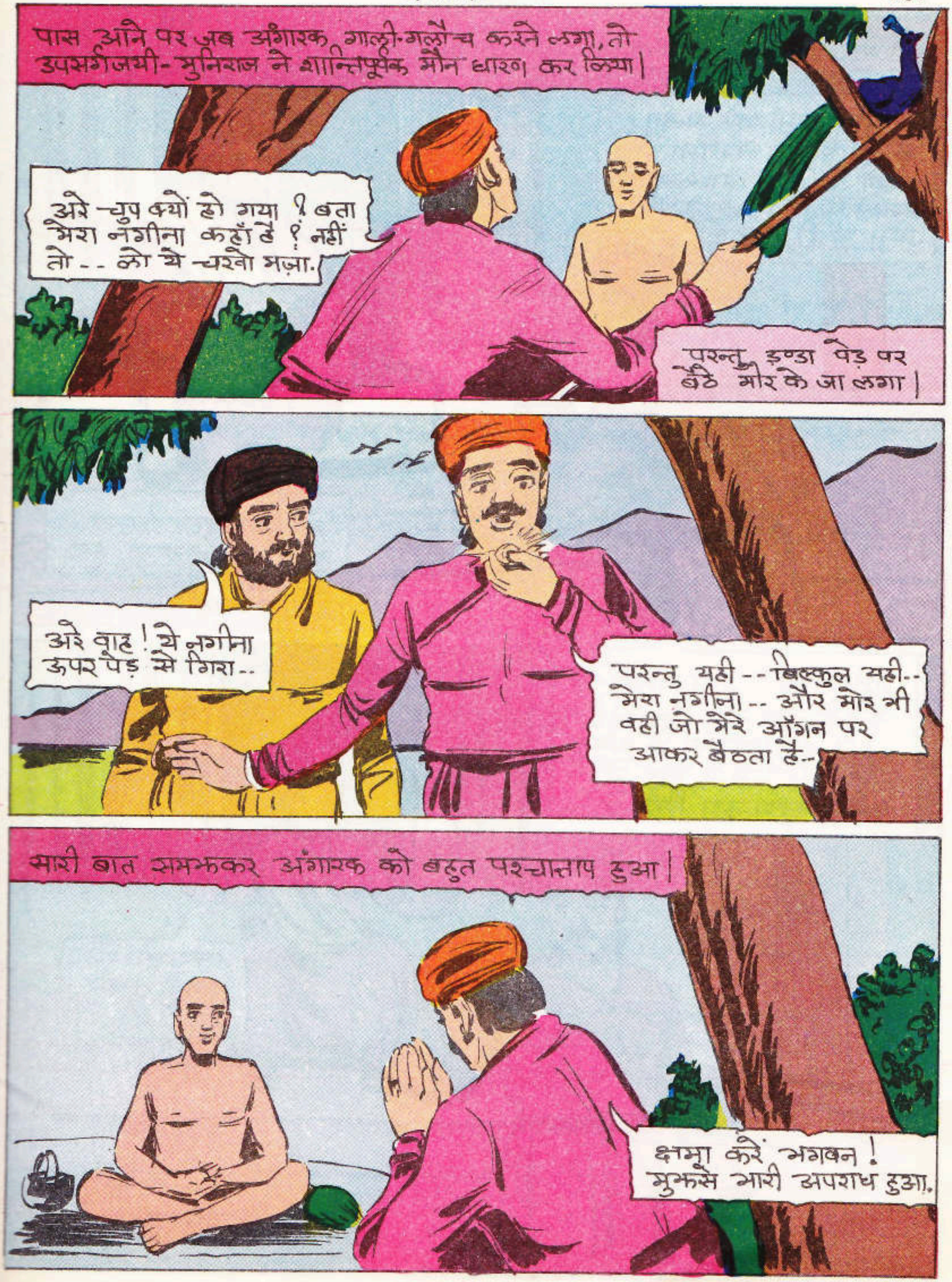
पास आने पर जब अंगारक गाली-गलौच करने लगा, तो उपसर्गजयी-मुनिराज ने शान्तिपूर्वक मौन धारण कर लिया।
अरे-चुप क्यों हो गया? बता मेरा नगीना कहाँ है? नहीं तो -- ले ये -चख मज़ा.
परन्तु डण्डा पेड़ पर बैठे मोर के जा लगा।
अरे वाह! ये नगीना ऊपर पेड़ से गिरा--
परन्तु यही -- बिल्कुल यही-- मेरा नगीना -- और मोर भी वही जो मेरे आँगन पर आकर बैठता है--
सारी बात समझकर अंगारक को बहुत पश्चाताप हुआ।
क्षमा करें भगवन! मुझसे भारी अपराध हुआ.

आत्मग्लानि से भरा अंगारक नगीना लेकर राजा के पास गया.
अपराध क्षमा करें राजन्! ये लो अपना नगीना और स्वर्ण..., इस जड़-रत्न को लगाने में मैंने अमूल्य नर-जन्म यूँ ही गंवाया।
अरे क्या हुआ? क्या तुमने रत्न लगाना बन्द कर दिया?
नहीं राजन! रत्न लगाने का काम तो अब शुरू कर रहा हूँ। अपने शुद्धात्मद्रव्य में संयम-रत्न --- जिसके लिए ये दुर्लभ मनुष्यजन्म मिला है।
हमारा पूरा राज्य धन्य है, तुम्हारे विचारों पर।
धन्य है अंगारक.
समाप्त

सम्पादकीय

भारतीय कथा साहित्य में जैन कथा साहित्य काफी समृद्धि लिये हुए तो है ही; साथ ही वह अपना अलग से वैशिष्ट्य लिए हुए भी है । जिसके कारण भले ही उसके कुछ पात्र अन्य कथाओं से साम्य लिये हुए हों ; परन्तु उनके उददेश्य एकदम पृथक् व अपने दार्शनिक व नैतिक गरिमा के अंदाज लिये हुए हैं । यदि जैन कथाकारों से यह प्रश्न किया जावे कि तुम्हारे नायक में ऐसी क्या विशेषता है कि, जो अन्य कथाकारों से पृथक करके अपनी स्वतन्त्र पहिचान बनाने में सरलतमरूप से सक्षम हो, सहज ग्राह्य हो । तो जैन कथाकारों का एकमेव उत्तर होगा कि उनके नायक न तो ईश्वरीय रूप हैं , और न ईश्वर ही ; अपितु अपनी प्रभुता को प्रगट करने की महत्वाकांक्षा वाले वे सामान्य-पात्र हैं, कि जिनका लक्ष्य वीतरागता है, और अपने प्रतीक्षित-क्षण में उस वीतरागी नग्न दिगम्बर दशा को प्रगट करते हुए कथा का समापन करते हैं । जो कि सही अर्थों में इस संसार रूपी मंच में खेले जाने योग्य नाटक है । जैसा कि आप इस कॉमिक्स में पायेगें ही ।

इस कॉमिक्स का प्रिय पात्र ब्रह्मगुलाल फिरोज़ाबाद के समीप चन्द्रवार नामक स्थान का लगभग 16-17 वीं शताब्दी में पद्मावती-पुरवाल जाति को सुशोभित करने वाले एक अभिनयरत्न पुरुष हैं । इनका इस कामिक्स में कुछ पौराणिक व कुछ कल्पनालोक से लिए मोतियों को चुन-चुनकर यहाँ माला के रूप में पिरोया है ; ज़ो संस्कार-विहीन पीढ़ी का कण्ठहार बनी, तो मेरे लिए यह गर्व की बात होगी ; और मुक्ति-कामिक्स परिवार का सही वक्त पर सही कदम भी .....।

डा. योगेशचन्द्र जैन

इक्कीस कामिक्सों के संग बढ़ें इक्कीसवीं सदी को कदम ....

संरक्षक सदस्य	सम्मानित सदस्य	सदस्य
5001)	1001)	151)

क्या आप अपने बच्चों के तन ढकने को अच्छे कपड़े लाकर नहीं देते ?

हाँ ! भाई ! हाँ ! ....।

और आप उन्हें सभी सुख सुविधाएं नही देते जिनकी उन्हें आवश्यकता है?

हाँ ! हाँ ! क्यों नहीं ; हमें उनकी पूरी चिन्ता है ।

पर क्या आप उनमें सदाचार विचार निर्माण के लिए कुछ देते हैं ?

? ?

हाँ ! हाँ ! बोलिये बोलिये चुप क्यों हैं ?

परन्तु ....।

परन्तु वरन्तु कुछ नही ; हमने आपकी चिन्ता समझी है ,
अब ज्यादा देर ठीक नहीं ......।

आज ही 'मुक्ति कॉमिक्स' परिवार के सदस्य बनकर श्रेष्ठ आचार–विचार के अलंकरणों से अपने नन्हें–मुन्नें बच्चें को सजाकर इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कराइये । आज ही **'मुक्ति-प्रकाशन, अलीगंज'** के नाम ड्राफ्ट बनाइये

मुक्ति कॉमिक्स पढ़िये .... इक्कीसवीं सदी में चलिये ... ।

मुक्ति प्रकाशन, अलीगंज (एटा), उ.प्र., 207247